RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-07
July-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]

दर्शनः अर्थ एवं स्वरूप

अमनदीप शर्मा

शोधार्थी भाषा विज्ञान एवं पंजाबी कोशकारी विभाग पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला (पंजाब)

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 15 July 2019

Keywords
दर्शन, प्रमाण शास्त्र, विश्व विज्ञान, आत्मतत्व दर्शन, ईश्वरीय तत्व, मूल्य विज्ञान, समाज दर्शन, इत्यादि।

***Corresponding Author**
Email: jaidlongowal[at]gmail.com

ABSTRACT

दर्शन शब्द संस्कृत के 'दृश' धातु से बना है जिसका शाब्दिक अर्थ देखना अथवा जानना है। अंग्रेजी में दर्शनशास्त्र को Philosophy कहा जाता है जो 'Philos' तथा 'Sophia' नामक यूनानी शब्दों के मेल से बना है। दर्शन के अन्तर्गत प्रमाण शास्त्र, विश्व–विज्ञान, आत्मतत्व दर्शन, ईश्वरीय तत्व, मूल्य विज्ञान, समाज दर्शन, आदि अनेक विषय है। इस प्रकार दर्शन शास्त्र का क्षेत्र बहुत विस्तृत हैं जिसको जानने के लिए कड़े परिश्रम और चिन्तनमनन की गहन आवश्यकता है।

दर्शन का अर्थ

दर्शन शब्द संस्कृत के 'दृश' धातु से बना है जिसका शाब्दिक अर्थ देखना अथवा जानना है। जैसे यदि हमारे समक्ष एक गुलाब हो तो हम अपनी इन्द्रियों से उस गुलाब के फूल को देखते अथवा जानते हैं। यहाँ गुलाब को देखने अथवा जानने का अर्थ गुलाब के सार तत्त्वों का ज्ञान नहीं वरन् यहाँ जानने का अर्थ मात्र उसकी इन्द्रियानुभूति का होना है। पर दर्शनशास्त्र का सम्बन्ध मात्र ऐसी जानकारी अथवा ज्ञान से नहीं बल्कि यहाँ दर्शन का अर्थ तत्त्व ज्ञान से है। अतः प्रश्न यह उठता है कि तत्त्व किसे कहते हैं, इसका क्या अर्थ है? दर्शनशास्त्र में तत्त्व का अर्थ परम तत्त्व अर्थात् सर्वोच्च पदार्थ (ultimate reality) से समझा जाता है। इस दृष्टि से देखने पर कहा जा सकता है कि दर्शनशास्त्र वह विज्ञान है जो परमार्थिक तत्त्वों की खोज और विवेचना करता है।

अंग्रेजी में दर्शनशास्त्र को Philosophy कहा जाता है जो 'philos' तथा 'sophia' नामक यूनानी शब्दों के मेल से बना है। 'philos' का शाब्दिक अर्थ अनुराग अथवा प्रेम होता है तथा 'sophia' का अर्थ ज्ञान है। अतः 'philosophy' शब्द का अर्थ ज्ञानानुराग अथवा ज्ञान के प्रति प्रेम (Love for wisdom) कहा जाएगा।

Prof. Weber ने बहुत ठीक कहा है कि, ''सम्पूर्ण प्रकृति में निहित रूप की खोज एवं वस्तुओं की सार्वभौम व्याख्या ही दर्शन है।''[1]

दर्शनशास्त्र की उत्पत्ति पर विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि परम तत्त्व अथवा सर्वोच्च सत्ता की खोज़ अथवा उसके प्रति ज्ञानानुराग के परिणाम स्वरूप ही दर्शन की उत्पत्ति हुई है। अतः कोई भी व्यक्ति चाहे वह गणितज्ञ हो, मनोवैज्ञानिक या तत्त्वशास्त्री हो यदि वह सत्य की खोज के प्रति सतत् प्रयत्नशील है अथवा उसके प्रति अनुराग रखता है तो वह दार्शनिक कहा जा सकता है। सच पूछा जाए तो सम्पूर्ण विश्व या प्रकृति की समुचित, तर्कपूर्ण एवं व्यवस्थित व्याख्या ही दर्शन है।

दर्शनशास्त्र का उद्भव

दर्शनशास्त्र के अर्थ को समझ लेने के बाद दर्शन की उत्पत्ति पर विचार करना आवश्यक है। मानव स्वभाव से ही जिज्ञासु है। बच्चा ज्यों ही बोलना सीख लेता है वह अनेक प्रश्न करने लगता है। जैसे रात दिन क्यों होते हैं? सूर्य से रोशनी क्यों निकलती है? पानी पीने से प्यास क्यों मिटती है? इत्यादि। बच्चों द्वारा किए जाने वाले ये सारे तथा इसी प्रकार के अनेकानेक प्रश्न इस बात के सूचक हैं कि उनमें निहित जिज्ञासु–प्रवृत्ति अत्यन्त ही शक्तिशाली है। क्योंकि बच्चों की उम्र तथा उनकी मानसिक अपरिपक्वता के कारण हम भले ही उनके इन प्रश्नों को अनर्गल कह कर टाल दें पर जब वही बच्चे पूर्ण विकसित और परिपक्व हो जाते हैं और उनके सामने जगत् और जगत से सम्बन्धित अनेकानेक वस्तुएं और घटनाएं प्रश्न–चिन्ह बनकर उभरती रहती है तो उन्हें सरलतापूर्वक टाला नहीं जा सकता। वे हमारे मन मस्तिष्क को इन प्रश्नों के समाधान के लिए विवश करती हैं। अपनी जिज्ञासु–प्रवृत्ति के कारण ही मानव प्रारम्भ से ही जगत् और जगत् की समस्याओं को सुलझाने में प्रयत्नशील रहा है। वह यह जानना चाहता है कि दृश्य जगत क्या है? वस्तु जगत् की उत्पत्ति कैसे हुई? इसका निर्माता कौन है? विश्व जिस रूप में हमें दिखता है, क्या वही उसका सत्य स्वरूप है। वह स्वयं क्या है? मृत्यु के बाद क्या है? क्या शरीर जो जड़ है उसमें कोई अन्य तत्त्व भी निहित है? ज्ञान की सीमा और उसकी प्रमाणिकता क्या है? ये सारे इसी प्रकार के ऐसे अनेक प्रश्न हैं जिन्हें बालसुलभ जिज्ञासा कहकर सहज ही टाला नहीं जा सकता। इसका

[1] उद्धत, कृष्ण मुरारी प्रसाद वर्मा, 'पाश्चात्य दर्शन', दर्कात से कान्ट तक', पृ. 2

RRIJM 2015, All Rights Reserved

समाधान आवश्यक है। क्योंकि हमारे जीवन से इसका गहरा लगाव है। यह कहना अनुचित न होगा कि विश्व में निहित रहस्यात्मक तथ्यों के प्रति सहज जिज्ञासा और उनकी संतुष्टि के प्रयत्न स्वरूप दर्शन का उद्भव हुआ है।Plato ने ठीक ही कहा है कि दर्शन की उत्पत्ति जिज्ञासा से होती है। सच कहा जाए तो दार्शनिक चिन्तन एक मानवीय विवशता है।

Dr. H. Satphen ने कहा था कि हमारे समक्ष प्रश्न 'दर्शन' और 'नहीं दर्शन' का वरन् अच्छे दर्शन और बुरे दर्शन का है – हर बौद्धिक व्यक्ति का कोई न कोई दर्शन अवश्य होता है।[2]

हर एक व्यक्ति का कोई न कोई दर्शन अवश्य होता है लेकिन जिज्ञासु व्यक्ति ही एक अच्छा दार्शनिक हो सकता है। मनुष्य जितना जिज्ञासु होगा उतना ही वह दार्शनिक चिन्तन के अधिक निकट होगा।

यदि हम भारतीय दर्शन की ओर दृष्टिपात करें तो पता चलता है कि यहाँ प्रश्न दर्शन की उत्पत्ति का मूल कारण जीवन और जगत् के प्रति घोर असन्तोष की भावना है। दुःख, पीड़ा, वेदना, असन्तोष, राग, द्वेष, बुढ़ापा, मृत्यु इत्यादि मानवीय मन को विचलित कर देते हैं। ऐसी दशा में एक विवेकशील व्यक्ति सहज ही इनके कारणों और निदान की खोज का प्रयास करता है जिससे दर्शन की उत्पत्ति होती है। बौद्ध दर्शन इस बात का अनूठा प्रमाण है कि किस प्रकार सांसारिक दुःखों को देखकर गौतम बुद्ध जीवन और जगत् के प्रति अनासक्त हो जाते हैं। पर जीवन और जगत् के दुःखों को देखकर वे अपने जीवन का अन्त नहीं कर देते बल्कि इनके कारणों और निदान को जानने की उनके मन में प्रेरणा जागती है जिसके परिणामस्वरूप बौद्ध दर्शन का प्रादुर्भाव होता है। अतः जहाँ तक भारतीय दर्शन का सम्बन्ध है इसका प्रादुर्भाव जीवन और जगत् के प्रति घोर असन्तोष की भावना कहा जा सकता है।

दर्शन की उत्पत्ति के प्रश्न पर विभिन्न पहलुओं से देखने पर मुख्यतः तीन प्रकार के मत स्पष्ट होते हैं। पर मौलिक रूप से इन तीनों में कोई भेद नहीं। उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर आते हैं कि मानव का जब कभी भी किसी समस्या से सामना होता है तो वह उसके समाधान हेतु क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित चिन्तन के लिए विवश होता है। जिसके परिणामस्वरूप दर्शन की उत्पत्ति होती है। अतः दार्शनिक चिन्तन मानवीय विवशता है। यह मात्र मानसिक व्यायाम नहीं, बल्कि जीवन और जगत् के प्रति एक ऐसी आवश्यक मांग है जिसे सरलतापूर्वक नकारा नहीं जा सकता। कोई भी व्यक्ति, कम से कम सामान्य व्यक्ति कभी भी अपने को दर्शन से अछूता नहीं रख सकता। यहउसकी एक ऐसी आवश्यकता है जिससे वह सहज ही छुटकारा नहीं पा सकता। Dr. Paulren ने ठीक ही कहा है कि ''हर राष्ट्र और हर व्यक्ति का, जो सामान्य है, कोई न कोई दर्शन अवश्य होता है। साधारण व्यक्ति का भी एक दर्शन होता है। इस प्रकार प्रकृति के साम्राज्य में रहने वाले हर व्यक्ति का अपना दर्शन है।''[3] इस प्रकार कहा जा सकता है कि मानव विशाल प्रकृति का एक अंग है तथा जीवन की कुछ प्राकृतिक मांगे हैं। जीवन की बाह्य एवं आन्तरिक मांगों के प्रति जागरूक रहने तथा व्यवस्थित चिन्तन के फलस्वरूप दर्शन की उत्पत्ति होती है।

दर्शनशास्त्र का क्षेत्र

दर्शनशास्त्र का अर्थ और इसकी उत्पत्ति पर विचार कर लेने के बाद इसके विषय–वस्तु की चर्चा करना आवश्यक है। जैसा कि कहा जा चुका है कि जीवन और जगत् की समस्याएं दर्शन के उद्भव स्रोत हैं। अतः यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि सम्पूर्ण जीवन और जगत् से सम्बन्धित प्रश्न दर्शन के विषय हैं। दर्शन का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक और विस्तृत हैं क्योंकि यह सम्पूर्ण प्रकृति का एक इकाई के रूप में अध्ययन करता है। जिस प्रकार भौतिक विज्ञान जड़ पदार्थों तक रासायन विज्ञान रासायनिक तत्वों तक, शरीर विज्ञान शारीरिक अवयवों तक सीमित है वैसी बात दर्शनशास्त्र के साथ नहीं। दर्शन इन सारे विज्ञानों से पूर्णतः पृथक एक ऐसा विज्ञान है जिसके अन्तर्गत जीवन की सारी अनुभूतियों एवं समस्याओं पर व्यवस्थित ढंग से विचार किया जाता है। कोई भी सत्य या तथ्य जिनकी मानवीय अनुभूति होती है या हो सकती है दर्शन के विषय कहे जा सकते हैं। दूसरे शब्दों में दर्शनशास्त्र वह विज्ञान है जो विभागीय तथ्यों को एक सूत्र में बाँधने का प्रयास करता है। दर्शन की उत्पत्ति पर विचार करते समय इस बात की ओर संकेत किया जा चुका है कि दर्शन की उत्पत्ति का मूल कारण जीवन और जगत् की समस्याएं हैं। पर चूंकि हर व्यक्ति का विकास अलग–अलग परिस्थितियों में अलग–अलग रूप से होता है जिसके परिणामस्वरूप उनका मानसिक स्तर भी एक–दूसरे से भिन्न होता है इसलिए यह स्वाभाविक है कि उनका दर्शन भी अलग–अलग हो। यदि व्यापक दृष्टि से देखा जाए तो निम्नलिखित विषयों को दर्शन के विषय विस्तार के अन्तर्गत माना जाता है।

1) प्रमाण शास्त्र(Epirtenrology)

यह दर्शनशास्त्र का वह अंग है जिसके अन्तर्गत ज्ञान से सम्बन्धित प्रश्नों पर विचार किया जाता है। जैसे ज्ञान का अर्थ क्या है? ज्ञान की उत्पत्ति कैसे होती है? इसका स्त्रोत क्या है? क्या ज्ञान सम्भव है और यदि है तो इसकी सीमा क्या है? फिर यदि ज्ञान सम्भव है तो इसकी प्राप्ति का साधन क्या है? प्राप्त ज्ञान का स्वरूप और इसकी प्रमाणिकता क्या है? ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिन पर निष्पक्ष एवं व्यवस्थित ढंग से विचार करना प्रमाण–शास्त्र का मुख्य लक्षण है।

2) विश्व–विज्ञान (Cormology)

[2] उद्धत, कृष्ण मुरारी प्रसाद वर्मा, 'पाश्चात्य दर्शन', दर्कात से कान्ट तक', पृ. 2

[3] उद्धत, कृष्ण मुरारी प्रसाद वर्मा, 'पाश्चात्य दर्शन', दर्कात से कान्ट तक', पृ. 4

इसके अन्तर्गत दृश्य जगत् और उससे सम्बन्धित प्रश्नों पर विचार किया जाता है। दर्शन का एक मुख्य कार्य इस बात की समुचित व्याख्या करना है कि विश्व की रचना किस प्रकार हुई है। ब्राह्मांड एक है या अनेक? दृश्य जगत् का मौलिक स्वरूप क्या है? क्या यह भौतिक है अथवा आध्यात्मिक? क्या विश्व की रचना ईश्वर द्वारा हुई है या मात्र विकास प्रक्रिया का परिणाम है?

3) आत्मतत्व दर्शन (Metaphysics of Soul)

आत्मा क्या है? आत्मा का स्वरूप क्या है? क्या यह एक है अथवा अनेक? क्या शरीर के नष्ट होने के साथ आत्मा का भी नाश हो जाता है अथवा आत्मा अमर है? आत्मा और शरीर के बीच किस प्रकार का सम्बन्ध है इत्यादि, ऐसे प्रश्न हैं जिनकी विवेचना आत्मतत्व दर्शन के अन्तर्गत की जाती है।

4) ईश्वरीय तत्व–दर्शन या ईश्वरवाद (Theology)

ईयूक्टीव तत्व–दर्शन, दर्शन का एक महत्वपूर्ण अंग है जिसके अन्तर्गत ईश्वरीय सत्ता से सम्बन्धित विविध प्रश्नों पर विचार किया जाता है। जैसे ईश्वर क्या है? उसका स्वरूप और उसकी संख्या क्या है। क्या यह एक है अथवा अनेक? यदि ईश्वरीय सत्ता का अस्तित्व है तो उसका प्रमाण क्या है? विश्व के साथ ईश्वर का क्या सम्बन्ध है? क्या ईश्वर विश्वव्यापी है या विश्वातीत अथवा दोनों? इत्यादि ईश्वरवार के मुख्य प्रश्न माने जाते हैं।

5) मूल्य विज्ञान (Science of Values)

मूल्य विज्ञान दर्शनशास्त्र का वह अंग है जो मानवीय व्यवहारों का नैतिक मूल्यांकन करता है। शुभ–अशुभ, पाप–पुण्य, उचित–अनुचित, नैतिक–अनैतिक इत्यादि नैतिक मूल्यों का विश्लेषण और विवेचन करना इसका मुख्य कार्य है। यही कारण है कि मूल्य विज्ञान को नैतिकता का विज्ञान Science Morality अथवा नीति विज्ञान (Ethics) भी कहा जाता है।

6) समाज दर्शन (Social Philosophy)

यह दर्शन का वह अंग है जिसका कार्य–क्षेत्र व्यक्ति और समाज से सम्बन्धित विविध विषयों का अध्ययन और विवेचन करना है। जैसे व्यक्ति और समाज के बीच क्या सम्बन्ध हैं? परिवार क्या है? इसके कार्य क्या हैं? राज्य की उत्पत्ति कैसे हुई? इसके कार्य क्या हैं? इसके कार्य क्या हैं? इनके अतिरिक्त इसके अन्तर्गत राजनीतिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय नैतिकता इत्यादि से भी सम्बन्धित प्रश्नों पर विचार किया जाता है।

दर्शनशास्त्र के अन्तर्गत आने वाले जिन विषयों की ओर हमने संकेत किया है उनके अतिरिक्त भी अन्य विषय जैसे शिक्षा (Philosophy of Education) तर्कशास्त्र (logic) तथा राजनीति दर्शन (Political Philosophy) इत्यादि भी हैं जो दर्शनशास्त्र के विषय–वस्तु के अन्तर्गत माने जाते हैं। पर महत्व की दृष्टि से इनका स्थान गौण है। सारांश यह है कि दर्शनशास्त्र जीवन और जगत से जुड़े हुए प्रायः सभी प्रश्नों पर विचार करता है। इस संदर्भ में John Caird का विचार उल्लेखनीय है जिनके विचारानुसार ''मानवीय जीवन की कोई भी अनुभूति, सत्य का कोई भी पहलू ऐसा नहीं है जिसे दर्शन के क्षेत्र से बाहर माना जा सके या जहां तक दार्शनिक खोज नहीं की जा सकती।

अतः हम कह सकते हैं कि दर्शनशास्त्र का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। दर्शनशास्त्र के अंतर्गत अनेक विषय आते हैं जिनको जानने के लिए परिश्रम और चिन्तन–मनन की गहन आवश्यकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

कृष्ण मुरारी प्रसाद वर्मा : **'पाश्चात्यदर्शन' देकार्त से कान्ट तक'**, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।

चन्द्रधर शर्मा : **'भारतीय दर्शन': अलोचना और अनुशलीन**, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली

नगेन्द्र : **'भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका'**, नेशनल पब्लिकेशन हाउस, दिल्ली, प्रथम संस्करण–1980

वाचस्पति गैरोला : **'भारतीय दर्शन'**, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1983

कोश ग्रंथ

1. दी न्यु डिक्शनरी ऑफ थाट्सः लव
2. रामचन्द्र वर्माः 'शब्दार्थक ज्ञान कोश', लोक भारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद